# विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. /-
आजीवन शुल्क रु. /-

बुद्धवर्ष 2558, आश्विन पूर्णिमा, 8 अक्तूबर, 2014 वर्ष 44 अंक 4

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx


## धम्मवाणी

**"सब्बे धम्मा अनत्ता"ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।**
**अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥**

*धम्मपद- २७९, मग्गवग्गो.*

**'सभी धर्म अनात्म हैं' (याने, लोकीय अथवा लोकोत्तर जो कुछ भी है, वह सब अनात्म है, 'मैं' 'मेरा' नहीं है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-) प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको सभी दुःखों से निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात, दुःख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) - ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!**

## महासमय सुत्त की व्याख्या

रंगून, १३-६-६८

प्रिय शंकर! सीता! राधे! विमला!

धर्मचारी बनो!

आज 'महासमय' दिवस है। आज के दिन भगवान बुद्ध ने महासमय सुत्त की उद्घोषणा की थी।

तुमने सुना होगा, बुद्ध के जीवन-काल में शाक्यवंशी क्षत्रियों में और बुद्ध के ननिहाल वाले कोलियवंशी क्षत्रियों में सदा अनबन रहती थी। रोहिणी नामक नदी के इस पार शाक्य और उस पार कोलिय क्षत्रिय बसे हुए थे। आपसी मनमुटाव का एक बहुत बड़ा कारण इस नदी का जल था, जो कि दोनों ओर के खेतों को सींचने के काम में लिया जाता था। कभी-कभी जबकि नदी में जल कम हो जाता और गरमी के कारण दोनों ओर के खेतों को सिंचाई की नितांत आवश्यकता होती तब पारस्परिक तनाव बहुत बढ़ जाता। नदी में पानी इतना नहीं होता कि दोनों ओर के खेतों को सींचा जा सके; तब कौन कितना पानी ले-- इस पर तकरार बढ़ जाती।

एक बार, झुलसती हुई गरमी के दिनों में इसी बात को लेकर दोनों पक्षों की तू-तू, मैं-मैं इतनी अधिक बढ़ गयी कि तलवारें म्यान के बाहर निकल आयीं। दोनों ओर के क्षत्रिय अपनी-अपनी मांग पर अड़ गये। सेनाएं सन्नद्ध हो गयीं; युद्ध-भेरी बज उठी।

भगवान ने अपने योगबल से देखा कि उनके वंश के लोग परस्पर कट-मरने के लिए तत्पर हो उठे हैं। वे तत्काल युद्ध-स्थल पर पहुँचे और दोनों ओर के योद्धाओं को समझाते हुए कहा कि उस तुच्छ नदी-जल के मुकाबले तुम क्षत्रिय-कुमारों की धमनियों का शोणित कहीं अधिक मूल्यवान है। उसे व्यर्थ धरती पर मत बहाओ। फिर दोनों दलों को शांत करते हुए उन्होंने धर्मोत्थायिनी देशना दी। सत्यवाणी सुन कर ५०० युवा शाक्य और कोलिय राज-पुत्र योद्धा तत्क्षण धर्म-संवेग प्राप्त कर घर से बेघर हो, प्रव्रज्या ग्रहण कर, बुद्ध के भिक्षुसंघ में सम्मिलित हो गये। इन ५०० भिक्षुओं ने बुद्ध से विपश्यना ध्यान सीखते हुए अत्यंत उन्नत अरहंत फल की अवस्था प्राप्त की। अब इन ५०० तरुण तेजस्वी अरहंत भिक्षुओं के साथ भगवान कपिलवस्तु से कुछ दूर हिमवंत प्रांत के महावन नामक कांतार में जा कर ठहरे।

भगवान ने कहा -- जब कोई (युवा ब्रह्मचारी) ब्रह्माचरणयुक्त व्यक्ति भिक्षु बन अरहंत पद प्राप्त करता है, तब वह अपने समस्त चित्तमलों को विदीर्ण कर ऐसे ही प्रभासित होता है जैसे कि निरभ्र आकाश में पूर्णिमा का चांद चमकता है।

इन ५०० ओजस्वी अरहंतों के साथ जब भगवान हिमवंत के महावन में विहार कर रहे थे, तब विभिन्न देवलोकों में इसकी चर्चा चली और दस लोकों के अनेक देवगण बुद्ध-प्रमुख चंद्रमा से चमकीले नव-भिक्षुओं के दर्शनार्थ इस महावन में एकत्रित हुए। अलग-अलग चक्रवालों के और अलग-अलग देव-ब्रह्म लोकों के आकाशस्थ और भूमस्थ देवों में से कइयों ने उल्लास के गीत गाये :--

**तत्र भिक्खवो सम्मादहंसु, चित्तमत्तनो उजुकं अकंसु।**
**सारथीव नेत्तानि गहेत्वा, इन्द्रियानि रक्खन्ति पण्डिता।।**

*(-- दी.नि. २.७.३३२, महासमयसुत्तं)*

- भिक्षुलोग अपने चित्त को सीधा कर समाहित हैं, ध्यानलीन हैं, जैसे विज्ञजन कुशल सारथी की भांति इंद्रियरूपी घोड़े की लगामों को खैंच कर वश में किये रहते हैं।

नाना वर्ण और नाना आकार-प्रकार वाले, दिव्य वस्त्राभूषणों से अलंकृत देवताओं को इन नये भिक्षुओं और बुद्ध के प्रति विपुल श्रद्धावान हो, आमोद और हर्ष प्रकट करते हुए देख कर भगवान ने भिक्षुओं से उन देवताओं के संबंध में कहा, जो कि धरती के भिन्न-भिन्न भागों से, पहाड़ों की कंदराओं से, और अंतरिक्ष स्थित देवलोकों से आये थे और जो सिंह के समान दृढ़, निर्भय, रोमांचरहित, पवित्र मन वाले, शुद्ध, प्रसन्न, निर्दोष और ध्यानारूढ़ थे।

**...ततो आमन्तयी सत्था, सावके सासने रते।।**
**"देवकाया अभिक्कन्ता, ते विजानाथ भिक्खवो"।**
**ते च आतप्पमकरुं, सुत्वा बुद्धस्स सासनं।।**
**तेसं पातुरहु ञाणं, अमनुस्सानदस्सनं।...**

...भगवान ने कहा, भिक्षुओं जो देवता आये हैं, उन्हें दिव्य-चक्षु से देखो। उनकी आज्ञा सुन कर भिक्षुओं ने प्रयत्न किया और दिव्य-चक्षु उत्पन्न कर उन देवताओं को देखा।... उनमें से कुछ भिक्षुओं ने सौ देवताओं को देखा, कुछ ने सत्तर हजार को, कुछ ने लाख देवताओं को देखा और किसी-किसी ने तो सभी दिशाओं को असंख्य देवताओं से भरा देखा। *(-- दी. नि. २.७.३३४, महासमयसुत्तं)*

जब सभी भिक्षु इस प्रकार देव-दर्शी हो गये, तब भगवान ने उन एकत्र देवताओं में से कइयों का परिचय कराते हुए कहा ये सब ऐसे आश्रवरहित, कालिमारहित, चंद्रमासदृश महानाग रूपी भगवान बुद्ध और उनके भिक्षुओं का दर्शन करने आये हैं, जो आगामी जन्मों से मुक्त हो गये हैं; राग, द्वेष और मोह से छूट गये हैं और भव-बाधाओं से पार हो चुके हैं। और फिर इन देवताओं के नाम-धाम की घोषणा करते हुए भगवान ने इनके रंग-बिरंगे होने का जिक्र किया और लगभग सभी के लिए ऐसे कहा है --

**इद्धिमन्तो जुतिमन्तो, वण्णवन्तो यसस्सिनो।**
**मोदमाना अभिक्कामुं, भिक्खूनं समितिं वनं।।**

*(-- दी.नि. २.७.३४०, महासमयसुत्तं)*

-- ऋद्धिमान, द्युतिमान, तेजस्वी कर्मवाले और यशस्वी देवता प्रसन्न होकर इस वन में भिक्षुओं के इस सम्मेलन को देखने आये हैं।

तब भगवान ने बताया कि इंद्र और ब्रह्मा सहित इन अनेक देवताओं के आगमन पर दुष्ट मारदेव भी अपनी मार-सेना सहित आ पहुँचा और आते ही मार ने तुमुल नाद में हल्ला बोल दिया --

**एथ गण्हथ बन्धथ, रागेन बद्धमत्थु वो।**
**समन्ता परिवारेथ, मा वो मुञ्चित्थ कोचि नं।।**

-- ''आओ! पकड़ो! बाँध लो! और सबको राग के वश में कर लो! कोई भी बच न पाये!'' इस प्रकार मेघ की तरह गरजता हुआ और बिजली की भांति कड़कता हुआ मार अपनी भयंकर सेना सहित पहुँचा। भगवान ने भिक्षुओं को संबोधन करते हुए कहा --

**मार सेना अभिक्कन्ता, ते विजानाथ भिक्खवो।**

*(-- दी.नि. २.७.३४२-३४३, महासमयसुत्तं)*

-- हे भिक्षुओ! जान लो, समझ लो कि यह मार सेना आ गयी है।

बुद्ध की घोषणा सुन कर सारे वीतराग भिक्षु वीर्यपूर्वक सचेत हो गये और इस प्रकार वह मार सेना हार कर भाग चली। इन भिक्षुओं का एक बाल भी बांका न कर सकी -- **नेसं लोमापि इञ्जयुं**। सभी संग्रामजित निर्भय और यशस्वी बुद्ध श्रावक मुदित मन हुए।

जो लोग इन शक्तियों के अस्तित्व को स्वीकार करके चलते हैं, उनके लिए एक-दो बातें और ध्यान देने लायक हैं। हम देखते हैं कि बुद्ध द्वारा सिखाये जाने पर और स्वयं प्रयत्न करने पर सभी ५०० अरहंतों ने दिव्य दृष्टि प्राप्त की, जिससे कि वे इन अदृश्य प्राणियों को स्वयं देख सकें। स्पष्ट है कि दिव्य-दृष्टि प्राप्त करना भी एक प्रकार की साधना है जिसे कि योग्य गुरु के निर्देशन में प्रयत्नशील सुपात्र शिष्य प्राप्त कर सकता है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह कि इन अरहंतों में से किसी-किसी ने दहाई की संख्या में, किसी ने सैकड़ों की संख्या में, किसी ने हजारों और किसी ने लाखों की संख्या में इन देव-यक्षों को देखा। किसी-किसी ने तो सभी दिशाएं इन देव-ब्रह्माओं से भरी हुई देखी, यानी, उन्हें अगणित संख्या में देखा।

हमने अपने आश्रम में भी देखा है कि जिन-जिन लोगों ने दिव्य-दृष्टियां प्राप्त की हैं उन-उन की शक्तियां एक जैसी नहीं हैं। एक दिव्य दृष्टिधारी अपने सम्मुख एक सौ देवों की परिषद बैठी देखता है, तो दूसरा हजार की और तीसरा उससे कहीं अधिक। परंतु जिन एक सौ देवों को प्रथम द्रष्टा देखता है और जिस रूप में देखता है, उनको उसी रूप में ही अन्य द्रष्टा भी देखते हैं। फर्क यही है कि वे पहले द्रष्टा से कुछ अधिक देख पाते हैं। उनकी दिव्य दृष्टि अधिक तेज है। वे अधिक दूर-द्रष्टा हैं। दिव्य दृष्टि का साधक कहीं किसी थोथी कल्पना में तो नहीं बह रहा, इसलिए दो द्रष्टाओं द्वारा देखे गये दृश्यों का अलग-अलग विवरण ले कर सत्य की जांच की जाती है। तभी मान्य होता है।

एक अन्य बात जो इन देवों के संबंध में ध्यान देने की है, वह यह है कि इनकी प्रशंसा में झूठी अतिशयोक्ति नहीं की गयी है। लगभग सभी के लिए कहा गया है --

**... महब्बला; इद्धिमन्तो जुतिमन्तो वण्णवन्तो यसस्सिनो।**

*(-- दी.नि. २.७.३३६, महासमयसुत्तं)*

-- यानी वे महाबलशाली हैं, ऋद्धिमान हैं, प्रकाशवान हैं, तेजवान हैं और यशस्वी हैं।

बलवान और ऋद्धिमान होना लगभग सभी अदृश्य देव-यक्षों का सामान्य गुण है। मनुष्य की तुलना में ये अधिक बलवान हैं और अधिक ऋद्धिमान है और वायव्य शरीर होने के कारण ऐसे काम कर सकते हैं जो मनुष्य के लिए सर्वथा असंभव है। अपने पूर्व जन्मों के सुकर्मों के कारण कोई-कोई मूलतः प्रकाशवान न होते हुए भी कम या अधिक प्रकाशवान और ज्योतिमान भी हैं। कोई-कोई सद्धर्म की विपश्यना भावना सीख कर प्रकाशवान और वर्णवान हुए हैं। ऐसा अपने यहां भी नित्य होता है। कोई-कोई निम्न कोटि का प्राणी जब गुरु के संपर्क में आ कर ध्यान सीखना आरंभ करता है तो उसकी आकृति भयानक और रंग बहुत काला होता है परंतु वही ध्यान के उच्च स्तरों पर पहुँचते-पहुँचते अत्यंत प्रकाशवान, द्युतिमान और वर्णवान हो जाता है।

ये अदृश्य देव हमारी रक्षा तभी करते हैं जब हम सद्धर्म के मार्ग पर अच्छी प्रकार चलते हैं, शील-संयम को धारण करते हैं, चित्त एकाग्र कर विपश्यना के ध्यान में बैठते हैं तब हमारे अंदर से जो भाव-तरंगें उत्पन्न होती हैं, उनसे प्रसन्न हो कर वे सारे देव, जो इस ध्यान-मार्ग के अवलंबी हैं, प्रमुदित होकर हमारे आस-पास आ बैठते हैं और ध्यान में हमारा साथ देते हैं। इस प्रकार अनेक अदृश्य साधकों की उपस्थिति वातावरण को अधिक शांत और निर्मल बनाती है और हमारा ध्यान अधिक दृढ़ होता है, चित्त का मैल जल्दी क्षय होता है, और विशुद्ध अवस्था जल्द प्राप्त होती है। इस प्रकार ये सम्यक देव हमारा रक्षण करते हैं। धर्मपालन में हमें सहारा देते हैं। परंतु यह सब तभी होता है, जब कि हम स्वयं धर्म-मार्ग पर आरूढ़ हों। अन्यथा न कोई देव पास फटकेगा, न कोई दैवी सद्वृत्ति। ऐसे सम्यक सन्मार्गी देवों के प्रति आदर का भाव रखने में कोई दोष नहीं, वैसे ही जैसे किसी सत्पुरुष, संत मानव के प्रति हम आदर का भाव रखते हैं। बस इससे अधिक नहीं।

इस महासमय सुत्त के अंत में हम देखते हैं कि जहां इतने देव-ब्रह्म एकत्रित हुए वहां दुष्ट देव मार भी अपनी मंडली सहित आ उपस्थित हुआ। इस मार का एक ही स्वभाव है जिसकी घोषणा करते हुए वह प्रवेश करता है -- ''पकड़ लो! बाँध लो! सबको राग के वश में कर लो! चारों ओर से घेर लो! कोई बच न जाय।'' अपने स्वभाव के अनुसार उसे इसी बात में सुख मिलता है कि अधिक से अधिक लोग उसके राग, द्वेष और मोह के जाल में फँसे रहें। इनमें से बाहर निकलने का प्रयत्न करने वाला हरेक प्राणी उसे अप्रिय लगता है। वह हर संभव तौर-तरीकों से, उपाय-साधनों से उन्हें बाँधने का प्रयत्न करता है। इसी मार-देव को हम यम देव कह सकते हैं। यम देव यानी मृत्यु का देव यानी मृत्यु के साम्राज्य का अधिपति। जहां कोई मृत्यु के चक्कर से निकल कर सचमुच अमर अवस्था प्राप्त करने की चेष्टा करता है, वहीं इसकी त्योरी चढ़ जाती है। अपने गुलाम को कौन मुक्त करना चाहेगा भला?

मुक्ति मार्ग के अवलंबी विपश्यना साधकों को इस मार से सदैव सतर्क रहना चाहिए। इसे जीतने का उपाय बड़ा सरल है और वह यही है कि प्रतिक्षण सचेत रहें। जागरूक हो गये तो इतने में मार सेना विलीन हो गयी। इस चोर के पांव नहीं होते। घर वाला जागा कि चोर भागा। बड़ा सरल उपाय है। कोई भी प्रयोग करके देख सकता है। जब कभी मन में प्रबल काम वासना उठे, तो मात्र क्षण भर के लिए आदमी सचेत हो कर केवल इस तथ्य को जान ले कि ओह! मुझमें यह काम वासना उठ रही है, और बस इतना देखना-जानना मात्र हुआ कि काम-वासना छुई-मुई के पत्तों की भांति दुबक गयी, जैसे थी ही नहीं। यही दशा क्रोध की है, अहंकार की है, ईर्ष्या की है। जैसे उठे, वैसे देख लो। ये वहीं विलुप्त हो जायँगे। पर लोग देखते कब हैं? जैसे ही कोई विकार उठता है, वैसे ही उस विकार के अधीन हो जाते हैं और उस समय तो जागरूकता का नामोनिशान भी नहीं होता। बस केवल वही विकार सिर पर सवार रहता है और सिर उस विकार रूपी पानी के नीचे डूबा रहता है। बहुत समय बीत जाने के बाद जब होश आता है तब आदमी उस विकार रूपी मार के अधीन की गयी मूर्खताओं का स्मरण करके पछताता है। परंतु तब क्या हो? यह जागरूक हो जाने का हथियार तो तभी कारगर होता है जबकि दुश्मन धावा बोल कर सिर पर चढ़ रहा हो। बाद में पश्चात्ताप करना बिल्कुल निरर्थक है।

अतः आओ, इस मार-बंधन से मुक्त हों और धर्म-साधना के मार्ग पर चलते हुए अपना मंगल साध लें। इसी में सब का कल्याण समाया हुआ है।

साशिष,

सत्यनारायण गोयन्का

---

## भदंत ञाणीसारजी के उद्‌गार

*(संगाई, बरमा के प्रसिद्ध भिक्षु सितगू सयाडो (भदंत ञाणीसारजी) पूज्य गोयन्काजी के बहुत बड़े प्रशंसक हैं। उनके नेतृत्व में पूज्य गोयन्काजी के अस्थि-विसर्जन के समय बरमा में रंगून, मचीना और मांडले में हजारों लोग एकत्र हुए। मांडले में सैकड़ों भिक्षु-भिक्षुणियों ने धम्ममण्डल वि. कें. से पमादी जेट्टी तट तक अस्थि-कलश की यात्रा में निम्न गाथा का सस्वर पाठ किया। पांच बड़ी नौकाओं पर सवार होकर इरावती नदी के मध्य में चारों ओर से गोलाकार घेरा बनाकर सब लोगों ने एक हजार प्रदीप प्रवाहित कर श्रद्धांजलियां अर्पित की। कलश-यात्रा आरंभ करने के पूर्व केंद्र पर संघदान का आयोजन किया गया था। उपस्थित भिक्षुसंघ और गृहस्थों को संबोधित करते हुए उन्होंने निम्न शब्दों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।)*

**अनिच्चा वत सङ्खारा, उप्पादवयधम्मिनो।**
**उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, तेसं वूपसमो सुखो।।**

-- सचमुच सारे संस्कार अनित्य ही तो हैं। उत्पन्न होने वाली सभी स्थितियां, वस्तु, व्यक्ति अनित्य ही तो हैं। उत्पन्न होना और नष्ट हो जाना, यह तो इनका धर्म ही है, स्वभाव ही है। विपश्यना साधना के अभ्यास द्वारा उत्पन्न होकर निरुद्ध होने वाले इस प्रपंच का जब पूर्णतया उपशमन हो जाता है-- पुनः उत्पन्न होने का क्रम समाप्त हो जाता है, उसी का नाम परम सुख है, वही निर्वाण-सुख है।

कुशीनारा के दक्षिण-पश्चिम में जब भगवान का परिनिर्वाण हो रहा था तब तावतिंस से शक्र देवताओं सहित इस पृथ्वी पर (मनुष्यलोक

में) उतरे और भिक्षुसंघ के सामने इसी गाथा का पाठ किया। महाब्रह्मा सहित बड़ी संख्या में ब्रह्मागण एकत्र होकर पुष्पांजलि अर्पित किए। उस दिन बहुत से भिक्षुओं का संघ भगवान को अंतिम श्रद्धांजलि देने एकत्र हुआ था। ठीक उसी तरह जैसे आज हम श्री गोयन्काजी को श्रद्धांजलि देने के लिए एकत्र हुए हैं। आयुष्मान सारिपुत्र और महामोग्गल्लान पहले ही निर्वाण प्राप्त कर चुके थे। आयुष्मान महाकाश्यप जो शासन का काम आगे बढ़ाने वाले थे, आ नहीं पाये थे। इसलिए पार्थिव शरीर की दाह-क्रिया का भार आयुष्मान अनुरुद्ध संभाल रहे थे।

तब महाब्रह्मा सहम्पति ने एक गाथा का पाठ किया, देवराज शक्र ने एक गाथा का पाठ किया, भदंत अनुरुद्ध ने दो गाथाओं का पाठ किया और आयुष्मान आनंद ने एक गाथा का पाठ किया। इस प्रकार भगवान के पार्थिव-शरीर का अंतिम दर्शन करते हुए सब लोगों ने प्रणाम किया।

आचार्य श्री गोयन्काजी की मृत्यु मुंबई, भारत में हुई। वहां उनका दाह-संस्कार किया गया। वे मांडले के नागरिक थे और उन्हें अपनी मातृभूमि से बड़ा प्रेम था। वे म्यंमा के एक कट्टर हिंदू परिवार में पैदा हुए परंतु बाद में विपश्यना के समर्थक और प्रबल प्रचारक हो गये। विपश्यना के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा थी क्योंकि विपश्यना ने उनके दुःखों को दूर किया था। विपश्यना के प्रति उनकी श्रद्धा दो बातों को लेकर थी-- एक तो सयाजी ऊ बा खिन, जिन्होंने उन्हें सांसारिक चिंताओं और दुःखों से मुक्त किया और उनके गुरु सया तै जी तथा उनके भी गुरु भदंत लैडी सयाडो, जिन्होंने गृहस्थ आचार्य-परंपरा का द्वार खोला।

दूसरी बात यह कि श्री गोयन्काजी म्यंमा के भिक्षुसंघ के प्रति बहुत कृतज्ञ थे, जिसने इस परंपरा को २५०० वर्षों तक शुद्धरूप में संभाल कर रखा। यह एक ऐसा आभार था जिसे साधारण बरमी भिक्षुसंघ नहीं समझ सका, जबकि भारतीय गोयन्काजी ने इसके महत्त्व को अच्छी तरह समझा। इन्हीं तथ्यों ने श्री गोयन्काजी को भारत में विपश्यना-केंद्र स्थापित करने की प्रेरणा दी और पूरे विश्व में विपश्यना के प्रचार-प्रसार के लिए प्रेरित किया। मैंने स्वयं यह बात श्री गोयन्काजी से कही और अनेक अवसरों पर दूसरों को भी बताया कि सम्राट अशोक के बाद श्री गोयन्काजी ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने धम्म का प्रसार भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में किया।

वस्तुतः मैंने उनको कम-से-कम तीन बार कहा कि आप आधुनिक अशोक हैं। इस पर उन्होंने कहा, ''अशोक से मेरी तुलना नहीं की जा सकती। हां, उसी बड़ी परंपरा से एकाकार होकर मैं अपना जीवन जीना चाहता हूं।'' दो बार उन्होंने ऐसा ही कहा, परंतु तीसरे अवसर पर जब हम दोनों मुंबई के समुद्रतट पर टहल रहे थे, पुनः मैंने उनकी तुलना अशोक से की तो वे सिर्फ मुस्कराये, ठीक उसी तरह जैसा कि आप इस चित्र में देख रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि भारत में आज बीस बरमी संघाराम हैं, लेकिन आपकी तरह कोई एक भी विपश्यना केंद्र स्थापित नहीं कर सका।

हां, इसके पहले आचार्य आयुष्मान महसि सयाडो और टांग पुलु सयाडो ने ही केंद्र स्थापित किए। उसके बाद की तुलना गोयन्काजी से नहीं की जा सकती। इसीलिए कहता हूं कि आप आज के अशोक हैं और वे सिर्फ मुस्कराये।

उन्होंने कहा भारत धम्म की जन्मभूमि है लेकिन आज शुद्ध धर्म यहां से लुप्तप्राय हो गया है। हम सब की जवाबदेही बनती है कि हम उसे पुनर्जीवित करें। मैंने जानबूझ कर उनसे पूछा कि धम्म से उनका क्या तात्पर्य है? उन्होंने कहा धर्म एक अनुशासन है, विचारधारा है, एक विधि है, एक तकनीक (प्रविधि) है। जब तक सत्य का पता न चल जाय, जीवन-मरण के अंतहीन चक्कर में पड़ कर दुःखमय जीवन जीते रहेंगे।

आदरणीय लोगों, गोयन्काजी का जाना अशोक का जाना है। गोयन्काजी क्या गये, आधुनिक अशोक चले गये। उनके जाने से संसार की दोनों आखें चली गयीं। संसार अंधा हो गया। सारी दुनिया दुःखी है, प्रभावित है-- अंग्रेज, अमेरिकन, अरब आदि सभी। श्री गोयन्काजी ऐसे थे जो कट्टर मुस्लिम को भी शिविर में बैठाते थे, जो यह विश्वास करते हैं कि सिर्फ अल्लाह का वचन ही सत्य है। उन्होंने इन लोगों को अपने विपश्यना केंद्रों में जगह दी और इजरायल के यहूदियों को भी। इसीलिए मैं कहता हूं कि इनके चले जाने का अर्थ है अशोक की तरह एक धर्मदूत का चला जाना। एक ऐसे व्यक्ति का चला जाना जिसने दुनिया को आंखें दीं। अब मुझे यह कलश-यात्रा आरंभ करने की अनुमति दें और इस दौरान शक्र द्वारा गायी गयी उस गाथा को भी समझ लें -- **अनिच्चावत सङ्खारा...**।

**सङ्खार**- कर्म, चित्त, ऋतु और आहार का मिश्रण है। ऐसे ही भौतिक पदार्थों से बना यह भवन भी अनित्य हैं। इसे हम धर्मगांव कह सकते हैं क्योंकि यहां धर्मोपदेश होता है। यदि हम यहां भोजन की बिक्री करें तो यह रेस्तरां हो जायगा। यदि यहां राजा और रानी रहें तो यह राजमहल हो जायगा। यदि यहां माल बेचें तो यह सुपर मार्केट (बाजार) बन जायगा। लेकिन यह वस्तुतः है क्या? यह ईंट, लोहा, लकड़ी, सीमेंट का सम्मिश्रण ही है। यह घर भी है, महल भी है, चिड़ियाघर भी और शौचलय भी। यह सभी के लिए एक समान है। चीनी, अंग्रेज, भारतीय, बरमी; ब्रह्म, देव, बिल्ली, मुर्गी या कुत्ते के लिए भी। इन सबों के रूप, नाम तथा हेतु-- ये तीनों हैं। इन तीनों का मिश्रण ही सङ्खार है। इन तीनों का गुण, धर्म स्वभाव जैसा ऊपर कहा गया, उत्पाद और व्यय है, बनना और बिगड़ना है। व्यय के बाद उत्पन्न होता है और फिर व्यय होता है। इस प्रकार यह सिलसिला अनंत चक्रवालों तक चलता रहता है।

विपश्यना क्या है? यह एक विधि है। हम ध्यान को अपने भीतर केंद्रित करते हैं, उत्पाद-व्यय का अन्वेक्षण करते हैं। यह एक ऐसी सच्चाई है जो हमारे शरीर के भीतर अनुभव की जाती है। जो उत्पन्न होता है वह नष्ट होता और नष्ट होने के बाद पुनः उत्पन्न होता है। **यदनिच्चं तं दुक्खं**-- जो अनित्य है वह दुःख है। अर्थात जहां अनित्यता है, वहां दुःख है और जो अनित्य और दुःख है वह अनात्म ही है। उसे 'मैं-मेरा' नहीं कह सकते। अतः अनित्य, दुःख और अनात्म अलग-अलग नहीं हैं। वे तीनों एक हैं। अनित्यता किसमें है? उत्पाद और व्यय में। तो विपश्यना में क्या देखते हैं? जो सच्चाई है उसे देखते हैं। वास्तविक सच्चाई क्या है? ये तीन मूल बातें- नाम, रूप और हेतु। इन तीन मूल बातों पर ध्यान केंद्रित करने का प्रयास करना उत्पाद-व्यय की क्रिया को उजागर करना है और इससे होने वाले दुःख को समझना है। इसे समझने पर अनात्म समझ में आता है और यह भी कि आप कितने असहाय हैं। आपका वश इन तीनों पर बिल्कुल नहीं है। इस प्रकार ध्यान करने से नाम-रूप से बने इस शरीर के प्रति आसक्ति धीरे-धीरे जाने लगती है। यही हम सब के भीतर का सत्य है।

इस सत्य का ज्ञान देने वाले भगवान बुद्ध को प्रणाम करते हुए देवराज शक्र ने उपरोक्त गाथा से वंदन किया, ऐसे ही अन्य सब ने अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये। हमें भी श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए यही कहना है कि निर्वाण और संसार में बहुत दूरी नहीं है। निर्वाण आप से उतना दूर नहीं है। इसे एक उदाहरण से समझें।

उदाहरण स्वरूप इरावती नदी का जल इस किनारे के तट को दूसरे किनारे के तट से अलग करता है। जब नदी भरी रहती है तब दोनों तट की दूरी बहुत होगी। लेकिन जब जल-स्तर कम होता है तब तटों की दूरी कम होती जाती है। और अंत में नदी में जब जल नहीं रहता तब दोनों तट एक हो जाते हैं। अर्थात दोनों तटों के बीच दीवार नहीं होती, व्यवधान नहीं होता। एक तट से दूसरे तट की यात्रा अखंड हो जाती है, आसान हो जाती है।

यह तथ्य बहुत महत्त्वपूर्ण है। हमें अपने अंतर को आस्रव-जल से नहीं भरना चाहिए। इसी आस्रव से भरी हुई जलराशि के कारण हम उस पार के तट निर्वाण को नहीं देख पाते। निर्वाण वस्तुतः शरीर (संसार) के साथ-साथ चलता है। आस्रव के कारण दो अलग-अलग तट दिखते हैं। विपश्यना इस क्लेश-जल को प्रज्ञारूपी घड़े से उलीचती है। निर्भर करता है कि किसी विपश्यना केंद्र में जाकर कितना जल उलीचा है आपने दस दिनों में। जल को बढ़ने न दें तो धीरे-धीरे उस तट के नजदीक होते ही जायँगे। जब सारा जल निःशेष हो जायगा, दोनों तट एक हो जायँगे। संसार और निर्वाण एक हो जायगा।

जो समय हमारे पास है उसमें इतना ही कहा जा सकता है। आज हमें आचार्य श्री गोयन्काजी की अस्थियों का विसर्जन इरावती नदी में करना है तो हमलोग भी इसी गाथा का पाठ करेंगे, उनको अंतिम बार प्रणाम करने के लिए। इसके अतिरिक्त और कोई पाठ नहीं, कोई कविता नहीं। हमलोग केवल इसी का पाठ करते रहेंगे और अपने अंदर की अनुभूतियों को भी देखते रहेंगे। **अनिच्चावत सङ्खारा**...।

**Registered No. NSK/235/2012-2014**

**WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014**

## पालि प्रशिक्षण कार्यक्रम- २०१५, विपश्यना विशोधन विन्यास, ग्लोबल विपश्यना पगोडा, मुंबई

१. एक महीने का निवासीय सघन **पालि-हिंदी** पाठ्यक्रम-- १० जनवरी से १२ फरवरी;
२. उच्च पालि-व्याकरण कार्यशाला -- १३ से १७ फरवरी;
३. पालि पढ़ना-लिखना सीखना (-- बरमी, रोमन एवं देवनागरी में) -- १० से १९ मई;
४. **पालि-अंग्रेजी** सघन निवासीय पाठ्यक्रम -- २५ मई से ९ अगस्त;
५. अनुवाद-कार्य के लिए कार्यशाला -- १० से १७ अगस्त;
६. अशोक के शिलालेख एवं बरमी लिपि कार्यशाला -- १ से ५ अक्टूबर;
७. उच्च पालि-व्याकरण कार्यशाला -- ३ से १४ नवंबर;
८. शोध-प्रणाली पर कार्यशाला -- १५ ले १९ नवंबर;

**इन कार्यक्रमों में भाग लेने की पात्रता (योग्यता)--**

अ) जिन्होंने कम-से-कम **तीन** १०-दिवसीय एवं **एक** सतिपट्ठान शिविर किया हो।
ब) स्नातक डिग्री या १५ वर्ष तक स्कूली पाठ्यक्रम पूरा किया हो।
स) अनुवाद और पालि-व्याकरण के लिए-- जिन्होंने वि.वि.वि. द्वारा संचालित निवासीय पालि-पाठ्यक्रम पूरा किया हो अथवा पालि में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की हो।

**विन्यास ने निम्न विषयों पर शोध का आयोजन किया है--**

१. संत वाणी में विपश्यना; २. तिपिटक में आयुर्वेदिक तत्व;
३. विपश्यना से बदलाव-- तब और अब;

यदि किसी ने इन विषयों पर कुछ काम किया हो तो उनका स्वागत है।
**संपर्क**-- ईमेल- mumbai@vridhamma.org; फोन- +91-22-33747560.

## नालंदा में १०-दिवसीय शिविर एवं विपश्यना केंद्र

ऐतिहासिक नव नालंदा महाविहार, नालंदा के सांस्कृतिक ग्राम में सरकार ने विश्व विद्यालय के विद्यार्थियों आदि के लाभार्थ लगभग ३०-३५ लोगों का विपश्यना शिविर नियमित लगता रहे, ऐसी व्यवस्था की है। इसमें गत २७ अगस्त से ७ सितंबर तक लगे शिविर में कई शोध-विद्यार्थी, प्रोफेसर्स और सरकारी अधिकारियों ने भाग लिया। ८ बरमी भिक्षु भी लाभान्वित हुए। अगला शिविर १० से २१ अक्टूबर तक होगा।

## नव नियुक्तियां

### सहायक आचार्य

१. कु. पारमिता सिन्हा, कोलकाता
२. श्री दत्तात्रय तायडे, मुंबई
3. Mr. Mudar Mannah, Germany
4. U Tun Tun Oo, Myanmar
5. U Soe Min Aye, Myanmar
6. Daw Khin Khin Win, Myanmar
7. Daw Tin Tin Oo, Myanmar

### बालशिविर-शिक्षक

१. श्रीमती इंदुबेन कापडी, कच्छ
२-३. श्री शीतल एवं श्रीमती सुजाता मुळे, सांगली
४. श्री प्रशांत मगदूम, सांगली
५. श्रीमती वर्षा तांबे, रत्नागिरि
६. डॉ. मेघना शेंडे, छिंदवाड़ा, म.प्र.
७. श्री केतन मेहता, भोपाल
८-९. श्री गोविंद एवं श्रीमती प्रीति वाणी, इगतपुरी
10. Mr Patrick Houston Australia
11. Mrs Tali Krieger Australia
12. Ms. Cornelia Pietschmann Germany
13. Mrs. Nayeli Weippert Germany
14. Mr Stijn Baecke Netherlands

## सयाजी ऊ बा रिवन की पुण्य-तिथि के उपलक्ष्य में एक-दिवसीय महाशिविर

**18 जिनवरी २०१५ को पूज्य माताजी की उपस्थिति में 'ग्लोबल विपश्यना पगोडा' में एक दिवसीय महाशिविर होगा। शिविर-समयः प्रातः 11 बजे से अपराह्न 4 बजे तक. यहां** 3 बजे के अस्थि-विसर्जन विडियो कार्यक्रम में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475-01/43/44-Extn. 9, **(फोन बुकिंग : प्रातः 11 से सायं 5 तक, प्रतिदिन) Online Registration: www.oneday.globalpagoda.org**

**दोहे धर्म के**

**चार सत्य हैं जगत के, इनसे मुख मत मोड़।**
**यही मार्ग है मुक्ति का, आश परायी छोड़॥**

**आठ अंग का आर्य-पथ, दिया बुद्ध भगवान।**
**पग-पग-पग चलते हुए, प्रकटे पद निर्वाण॥**

**बैठ पालथी मार कर, काया सीधी राख।**
**मौंन मौंन मन मौंन कर, चाख धरम रस चाख॥**

**दुःख-मूल उत्खनन की, पायी जिसने राह।**
**वही हुआ सुख-शांति का, सच्चा शाहंशाह॥**

**प्रज्ञा शील समाधि की, बहे त्रिवेणी धार।**
**डुबकी मारे सो तिरे, हो दुख-सागर पार॥**

**केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड**
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-
फोनः फैक्सः
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

**दूहा धरम रा**

**म्रित्यू आयी देख कर, संत न हुयो उदास।**
**बैठ पालथी मार कर, छोड्या अंतिम सांस॥**

**निज-हित पर-हित सरब-हित, जीवै संत सुजान।**
**निज-हित, पर-अनहित करै, दुरजन री पहचाण॥**

**संत संत सै एकसा, हिंदू बौद्ध'र जैन।**
**राग द्वेस नै त्याग कर, सुखी रवै दिन रैन॥**

**संत सुधा बांटत रवै, पीवै बिरलो कोय।**
**पातर फूट्यो बह गयी, सुधा ग्रहण किम होय?**

**नाम रूप दोन्यूं जळै, जळै सकल संसार।**
**सीतल सरवर सो रवै, संत सदा अविकार॥**

**मोरया ट्रेडिंग कंपनी**
**सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल,** ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: **morolium_jal@yahoo.co.in**
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- दूरभाष :
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, बी रोड, सातपुर, नाशिक- **बुद्धवर्ष 2558** **आश्विन पूर्णिमा, 8 अक्तूबर, 2014**

**वार्षिक शुल्क रु. 30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क रु. 500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2012-2014**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

**विपश्यना विशोधन विन्यास**
धम्मगिरि, इगतपुरी -
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
**फोन :**
**फैक्स :**
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org